VRI Series No. 109

धूप छांह री जिंदगी

(राजस्थानी दूहा)

सत्यनारायण गोयन्का

विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी- ४२२४०३
महाराष्ट्र, भारत

विपश्यनाः एक परिचय

श्री गोयन्काजी ने म्यंमा के महान विपश्यना आचार्य सयाजी ऊ बा खिन से सर्वप्रथम सन १९५५ में 'विपश्यना' की साधना सीखी। तब से अभ्यास का क्रम जारी रहा। सन १९६९ में भारत आये। व्यापार-धंधे से सर्वथा अवकाश ग्रहण कर भारत के विभिन्न स्थानों पर **विपश्यना** साधना-विधि के दस दिवसीय शिविर लगाते रहे। सन १९७६ में प्रमुख विपश्यना केंद्र 'धम्मगिरि' की स्थापना के पश्चात अब तक पूरे विश्व में लगभग ५० विपश्यना केंद्र स्थापित हो चुके हैं तथा अन्य नए-नए केंद्र खुलते चले जा रहे हैं, जहां साधकों के लिए निःशुल्क निवास तथा भोजनादि की स्थाई व्यवस्था रहती है। विपश्यना सिखाने का सारा खर्च कृतज्ञ साधकों के दान पर निर्भर होता है। शिविरों का संचालन पूज्य गोयन्काजी तथा उनके द्वारा नियुक्त विश्व भर के लगभग ४०० से अधिक सहायक आचार्यों द्वारा किया जाता है। शिविर-काल के दौरान साधकों को बाहरी संपर्क से दूर, केंद्रों पर ही रहना अनिवार्य होता है।

भगवान गौतम बुद्ध द्वारा गवेषित 'विपश्यना' विद्या सर्वथा संप्रदायहीन एक प्रयोग प्रधान विधा है जिसमें अपने भीतर की सच्चाई का दर्शन करते हुए अपने मन को निर्मल बनाना तथा ऋत यानी प्रकृति के नियम के अनुसार आचरण करने का अभ्यास किया जाता है। इसी को धर्म कहते हैं। कालांतर में हम **धर्म** शब्द का सही अर्थ भूल गये और संप्रदाय को ही धर्म मानने लगे। आज जबकि धर्म के नाम पर चारों ओर इतनी अराजकता फैली हुई है, यह सांप्रदायिकता-विहीन विद्या घोर अंधकार में प्रकाश-स्तंभ सदृश है।

ध्यान की यह विद्या सीखने के लिए हर संप्रदाय के लोग – चाहे वे हिंदू हों या मुस्लिम; जैन, ईसाई, बौद्ध हों या सिक्ख – सभी आते हैं। बच्चों से लेकर वृद्ध बुजुर्गों तक सब उम्र के लोग आते हैं। बहुत ऊंची शिक्षा प्राप्त व्यक्ति भी आते हैं तो दूसरी ओर बिल्कुल निरक्षर अनपढ़ लोग भी आते हैं। अत्यंत धन-संपन्न भी आते हैं और बिल्कुल धनहीन भी। पुरुष-नारी तथा डॉक्टर, वकील, इंजीनियर, व्यापार-उद्योगों के संचालक सभी आते हैं। किसी भी विपश्यना शिविर में समाज के हर वर्ग का यह अनूठा संगम आसानी से देखा जा सकता है। इतनी विविधताओं के होते हुए भी सभी लोग लाभान्वित होते हैं।

पूज्य श्री गोयन्काजी द्वारा रचित दोहों का यह लघु संकलन अधिक से अधिक लोगों को धर्म-मार्ग पर चल सकने के लिए प्रेरणा प्रदायक सिद्ध हो, यही मंगल भावना है।

विपश्यना विशोधन विन्यास.

मूल्यः रु. १/-

प्रकाशक ;

विपश्यना विशोधन विन्यास

धम्मगिरि, इगतपुरी- ४२२४०३, जिला- नाशिक, महाराष्ट्र, भारत

फोन: ०२५५३- २४४०७६, २४४०८६, २४४३०२ फैक्स: ०२५५३- २४४१७६.

धूप छांह री जिंदगी

परिवरतनमय जगत मँह, कुछ भी तो ध्रुव नांय।
समदर की सी लहरियां, उठ उठ गिरती जाय॥

हर बसंत पतझड़ हुवै, रवै न सदा बहार।
हर जोबन जर जर हुवै, यो भंगुर संसार॥

काया ही तेरी नहीं, छुटसी हो निष्प्राण।
तो ईं भौतिक जगत मँह, कुण तेरो नादान?

'मेरो मेरो' कर मर्‌यो, मेरो हुयो न कोय।
जद जग स्यूं जाणो पड़्‌यो, संग चल्यो ना कोय॥

सदा बदळतो ही रवै, अब छाया अब धूप।
कदै एक सो ना रवै, ईं धरती रो रूप॥

पल पल पलटत ही रवै, प्रकृति अपणो भेस।
अग-जग मँह थिर कुछ नहीं, देवै ओ संदेस॥

झोंको आयो मौत रो, झड़्‌यो पुराणो पान।
उगणो बढणो मुरझणो, मरणो अमिट विधान॥

बीज फूट पौधो हुयो, तरुवर घेर-घुमेर।
वृद्ध हुयो लकड़ा कट्‌या, हुयो राख रो ढेर॥

बिना बुलायां आवियो, बिन पूछ्‌यां ही जाय।
आते जाते जीव रो, हरख सोक कछु नांय॥

के ल्यायो थो साथ रै? के ले ज्यासी साथ?
आयो खाली हाथ ही, जासी खाली हाथ॥

छण भंगुर संसार मँह, क्यां रो मोद मनाय?
उदय अस्त रो खेल है, ज्यूं आयो त्यूं जाय॥

नाना बरणी बिहँगड़ा, रात बसेरो रुक्ख।
पो फाटी दिस दिस उड़्‌या, ईं मँह क्यांरो दुक्ख?

बिसय सुखां मँह डूबग्यो, समझ्यो ना सच बात।
च्यार दिनां री चांदणी, फेर अंधेरी रात॥

ईं दुनिया मँह मरण रो, कदे न आयो अंत।
जनम जनम मरता रह्या, प्राणी कोटि अनंत॥

के नारी के पुरुस के, युवा व्रद्ध के बाळ।
आठ पहर चौंसठ घड़ी, पल पल निगळै काळ॥

पूत न रक्छा कर सकै, बाप न सकै बचाय।
नूंतो आवै काळ रो, कूण सकै सरकाय॥

एक अकेलो आवियो, एकाकी ही जाय।
ईं बहतै संसार मँह, कोई साथी नांय॥

कितनो प्यारो पूत थो, कितनी प्यारी नार।
साथ न कोई दे सक्या, सभी हुया लाचार॥

समझौतो कीं रो हुयो, म्रित्युराज रै साथ।
डंको बाज्यो कूच रो, चाल्यो खाली हाथ॥

फूलां छायी बेल पर, लिपट्यो बिसधर ब्याळ।
जीवन री मुस्कान पर, छायो काळ कराळ॥

कळियां खिलग्यी फूल सी, सांझ पड्यां कुम्हळाय।
यूं ही खिलतो तरुणपण, जरा-जीर्ण हो ज्याय॥

जलम्यो कोमल कूंपळो, तरुवर हरियल पान।
जर जर होकर झर पड्यो, निरमम नियति विधान॥

पाका पाका फळ डरै, अब टपकण री बार।
पाका पाका नर डरै, अब सटकण री बार॥

हाय पूत! हा संपदा! हाय मान-सम्मान!!
हाय हाय करतां हुयां, निकळ्या तन स्यूं प्राण॥

देखत देखत बुझ गयो, आंख्यां हंदो तेज।
सांस आंवतो रुक गयो, सोयो म्रित्यू सेज॥

अंतर झांकी देखली, सास्वत कुछ भी नांय।
या नदिया-धारा जिसी, पल पल बहती जाय॥

पवन बेग स्यूं बादळी, खिर खिर बिखरी जाय।
यूं ही काया चित्त भी, पल पल पलटो खाय॥

ईं नस्वर संसार मँह, नित्य रवै ना कोय।
नित्य मान कर चिपकतां, केवल दुख ही होय॥

नित्य मान कर जगत रा, भोग रह्यो सुख भोग।
बीं मूरख नै सुख कठै? दुख रो ही संजोग॥

धन जोबन रो, रूप रो, बिरथा करै गुमान।
समय पक्यां जर जर हुवै, हुवै बसंत बिरान॥

काळ चक्र चलतो रवै, दिन बीतै फिर रात।
आता जाता ही रवै, संझ्या और प्रभात॥

कदे घुटै काळी घटा, कदे चमकतो चांद।
घिरती फिरती छांव नै, कूण सक्यो रै बांध?

रँगरळियां रेतां रुळी, बिपदां जग्यो बिलाप।
हँसणो पलट्यो रुदन मँह, यो जग रो अभिसाप॥

देखत देखत देखतां, राजा होग्या रंक।
रुळी रेत सेखी, मिट्या, मूंछां हंदा बंक॥

किसी सजायी जतन स्यूं, बा नोटां री थाक।
परबस हो देखत रह्यो, मिली राख मँह राख॥

जो जो जनमै जगत मँह, काळ कलेवो होय।
पण ईं पेटू काळ री, भूख न पूरी होय॥

छण आवै जद मौत रो, रोक सकै ना कोय।
तत्छण जाणो ही पड़ै, फुरसत होय न होय॥

नगर-निवासी ना बचै, बचै न गांव-गँवार।
कोई कुळ रो ना बचै, पड्यां काळ रो वार॥

कोई सुखसैया मरै, नंगी धरती कोय।
कोई अंबर मँह मरै, गहरै समदर कोय॥

धोळै दोपारै मरै, कोई काळी रात।
कोई संझ्या ही मरै, कोई मरै प्रभात॥

खातो-पीतो भी मरै, भूखो भी मर ज्याय।
अवधी जद पूरी हुवै, छण भर रुक ना पाय॥

के अनपढ विदवान के, के निरधन धनवान।
आगै पीछै सै गया, काळचक्र बलवान॥

बचै न तेली गांगुळो, बचै न रावळ भोज।
समय पक्यां जमदूतड़ा, मत्तै लेसी खोज॥

बासुदेव बलराम के, के अरजुन के भीम।
एक एक नै निगळग्यो, बळियो काळ असीम॥

रावण बच्यो न राम ही, काळ गयो गटकाय।
बुद्ध बच्यो ना देवदत्त, जनम लियो सो जाय॥

कोई जावै आज ही, कोई जावै काल।
एक न बाकी बच सकै, काळ बड़ो विकराळ॥

आगै पीछै च्यार दिन, जाणो सबनै होय।
मरण दंड सबनै मिल्यो, अमर अठै ना कोय॥

नामी-धामी सूरमा, पड्या काळ रै जाड़।
प्राण पखेरु उड़ चल्या, आंख्यां तोरण फाड़॥

बण्यो बहानो मौत रो, किसोंक जोध जवान।
खातां-पीतां सहज ही, निकळ्या तन स्यूं प्राण॥

चली न कोई चातरी, निबळ हुयो लुकमान।
आता जाता रुक गया, प्राणी हंदा प्राण॥

समय पक्यो धरती पड्यो, धन दौलत रो नाथ।
'मेरी मेरी' कर मर्यो, कोडी चली न साथ॥

काळराज रै सामनै, चलै न कीं री पोल।
मुट्ठी भींच्यां आवियो, चल्यो हथेळ्यां खोल॥

किसो देह स्यूं प्यार थो, किसो देह अभिमान।
साथ न चाली देह भी, बिवस छूटग्या प्राण॥

किसो सजातो देह नै, किसो देह स्यूं नेह।
प्राण छुट्या मिट्टी रही, मिली खेह मँह खेह॥

समरथ थो संसार मँह, डंको रह्यो बजाय।
पण आयो जद मरण छण, अबळ हुयो असहाय॥

जो आयो सो जावसी, ईं मँह मीन न मेख।
सतत पलटतो ही रवै, खेल नियति रो देख॥

दुख आयां मत रोय रै, मिटसी दो दिन मांय।
सुख आयां मत फूल रै, ओ थिर रैसी नांय॥

दुख आयां जातो दिखै, सुख आयां भी जाय।
ओ जग आतो जावतो, अठै अचल कछु नांय॥

सहस भुजा है काळ रै, तेरै केवल दोय।
समय पक्यां जाणो पड़ै, अठै अमर ना कोय॥

ज्यूं जनम्यो चालू हुयी, मरण पंथ पर दोड़।
रुकणै री फुरसत कठै? किसींक माची होड़॥

कठै गयी बा हेकड़ी, कठै गयी बा ऐंठ।
तन निरबळ मन दुरबळो, लीन्यो जरा लपेट॥

सिर धोळो मुँह बोखळो, बच्यो न साबत दांत।
याहि नियति री रीत है, होवै नाहिं दुभांत॥

भींच दांत मुट्ठी कह्यो, "यो मेरो संसार"।
फूंक निकळग्यी मुख खुल्यो, चाल्यो हाथ पसार॥

प्रतिपल परवाहित रवै, सरिता चित्त सरीर।
यो रोक्यां स्यूं ना रुकै, नदिया हंदो नीर॥

मनचाही होवै कदै, अणचाही भी होय।
धूप छांह री जिंदगी, के हांसै? के रोय?